बौद्ध–धर्म के विस्तार में अहिंसा और भारतीय प्रकृति–चिंतन

धीरज कुमार निर्भय

(एम.फिल.), बौद्ध–अध्ययन विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय

E-mail: dhiraj.nirbhay@gmail.com

एक धर्म के रूप में बौद्ध–धर्म की महत्ता उसके करुणा, मानवता और समता संबंधी विचारों के कारण है। बौद्ध–धर्म एक आकस्मिक घटित व्यापार नहीं था। वैदिक यज्ञवाद और बुद्ध–पूर्व काल से लेकर बुद्ध के काल तक प्रचलित दार्शनिक चिंतनों की पृष्ठभूमि में बौद्ध–धर्म का आविर्भाव हुआ। बुद्ध के जीवन और उनके उपदेशों की कथा, जैसी की वह पालि ग्रंथों में वर्णित है, उनके देवत्व के बजाय उनकी मानवता पर अधिक आश्रित है।

भगवान बुद्ध के उपदेशों का संक्षेपण इस प्रकार कर सकते हैं –

क. पाप–कर्म न करना

ख. जो कुछ भी शुभ (कुशल) कर्म हैं, उनका संचय करना, और

ग. अपने चित्त को शुद्ध रखना।

भगवान बुद्ध के कर्म संबंधी विश्वास का एक विशेष समाजशास्त्रीय महत्त्व है, क्योंकि वह व्यक्ति के अपने कर्म को उनके जन्म (जाति) से अधिक महत्त्व देता है। अशोक महान् के शासन–काल में बौद्ध–धर्म यद्यपि 18 सम्प्रदाओं और निकायों में विभक्त था, फिर भी वह

इसी समय, उसके राज्याश्रय में, न केवल एक अखिल भारतीय, बल्कि एक विश्व–धर्म ही बन गया। बौद्ध–धर्म का जो उत्तरी देशों, यथा – अफगानिस्तान, चीनी तुर्किस्तान (मध्य एशिया), चीन, तिब्बत, मंगोलिया, नेपाल, कोरिया और जापान में तथा दक्षिणी देशों यथा – सिंहल, बर्मा, थाई देश, कम्बोडिया, वियतनाम (चंपा), मलाया और इंडोनेशिया में प्रचार हुआ।

पालि त्रिपिटक साहित्य विश्व के अनेकों भाषाओं में अनुवादित हैं जो विश्व–साहित्य को समृद्ध करते हैं – पालि, संस्कृत, तिब्बती, चीनी, कोरियन, जापानी, बर्मी, सिंहली आदि। बौद्ध शिक्षा पद्धति में विहार–विद्यालय या संघाराम–विद्यालय से महाविहार या विश्वविद्यालय के रूप में बौद्ध–बौद्धेतर, भारतीय, विदेशी सबके लिए ज्ञान और दर्शन प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त किया। नालंदा महाविहार, औदंतपुरी, जगद्लपुरी एवं विक्रमशिला भूलाये नहीं जा सकते। सम्राट अशोक, मिनांदर, कनिष्क एवं हर्ष तथा पाल शासकों का योगदान विश्व को रणभेरी के बजाय धम्म–विजय से जीतना, कोई सामान्य बात नहीं हो सकती। महान् चीनी यात्री फाहियान, युआन–च्वांग और इ–त्सिंग का भारत–भ्रमण इसकी मानवतावादी शिक्षाओं की ही जीत है। वास्तुकला (स्तूप एवं चैत्य), मूर्तिकला (गांधार, मथुरा, अमरावती) और चित्रकला (अजंता–एलोरा, जावा) आदि उच्चतम मानवीय संवेदना एवं करूणा को प्रकट करते हैं।

महाभारत में मनुष्य के व्यक्तिगत सदाचार के महत्त्व की प्रशंसा की गई है और आर्य आष्टांगिक मार्ग का भी निर्देश है। बौद्ध देवताओं की प्रतिष्ठा हुई और स्वयं भगवान् बुद्ध विष्णु के अवतार माने गए।

एशिया के देशों में बौद्ध–धर्म के प्रसार के साथ बौद्ध–संस्कृति का भी प्रसार हुआ। इन नए विचारों से इन देशों को जो लाभ हुआ, वह न केवल धर्म के क्षेत्र में था बल्कि संस्कृति के क्षेत्र में, जो अपने विस्तृतम् अर्थ में ''समाज के एक सदस्य के रूप में मनुष्य के द्वारा अर्जित ज्ञान, विश्वास, कला, नीति, विधि और अन्य समर्थताओं और स्वभावों की युग्मित समष्टि है।''

बौद्ध–धर्म विश्व में शांति के लिए एक महान् शक्ति सिद्ध हुआ है। भगवान् बुद्ध की शांति, आत्म–बलिदान, करूणा और उदारता संबंधी–नीति महाभारत की इन पंक्तियों में प्रतिध्वनित हुई हैं :

अक्रोधेन जयेत् क्रोधं असाधुं साधुना जयेत्।
जयेत् कदर्यं दानेन जयेत् सत्येन चानृर्तम्।।

(क्रोध को अक्रोध से जीतें और बुरे को भले से। कंजूस को दान से और असत्य को सत्य से जय करें।)

अहिंसा का सिद्धांत

'अथ यत तपो दानम आर्जवम अहिंसा सत्य–वचनम् इति,
ता अस्य दक्षिणाः' – छान्दोग्य उपनिषद्

ऐतिहासिक भारत में अहिंसा के सिद्धांत का प्रयोग प्रथम बार उपनिषदों के लेखकों द्वारा वैदिक यज्ञों की क्रूरता के संबंध में किया गया। यहीं से शाकाहार का सिद्धांत विकसित हुआ। पाँचवीं सदी ई.पू. में बुद्ध ने बल देकर इसकी वकालत कर अपनी मुख्य शिक्षाओं में शामिल किया, सैद्धांतिक आधार प्रदान किया तथा इसे अतुलनीय अच्छाई बताया। चक्र के निशान को जो धर्म–युद्ध का (प्रायः रथ के पहिए के रूप में) प्रतीक था, को धर्म–शंति के प्रतीक चिन्ह (धर्म चक्र) में परिवर्तित करके बौद्ध–धर्म ने अहिंसा के क्षेत्र में मौलिक योगदान दिया। बौद्ध अहिंसा अंतर्दृष्टि को विविध क्षेत्रों, जैसे कि पर्यावरणीय आचार–संहिता, दैनिक जीवन, अन्य प्राणियों से संबंध तथा जिनके प्रति नैतिक विचार एवं समाज में किनारे कर दिए गए वर्गों की दशा को समझने की आवश्यकता में निश्चित रूप से लागू किया जा सकता है। आरंभिक भारतीय बौद्ध–धर्म के संदर्भ में हिंसात्मक क्रियाकलापों को मोटे तौर पर निम्नलिखित चार श्रेणियों में रखा जा सकता है –

1. संगठित झगड़ों जैसे युद्ध, लड़ाईयाँ आदि तथा असंगठित झगड़ों, जैसे हत्या, आत्महत्या, गर्भपात तथा ऐच्छिक मृत्यु आदि द्वारा होने वाली हिंसा।

2. याज्ञिक कर्मकांडों में जिनमें पशु–बलि तथा कभी–कभी मनुष्य की बलि दी जाती थी, द्वारा होने वाली हिंसा।

3. शिकारियों, कसाइयों, मछुआरों आदि के हाथों होने वाली हिंसा, जो मनुष्य के भोजन

तथा अन्य आवश्यकताओं – विशेषकर औषधि के उद्देश्य से की जाती थी। इस प्रकार, मनुष्य द्वारा मांस तथा मछली खाना हिंसा का महत्त्वपूर्ण अनुक्रम था।

4. कृषि कार्यों तथा इससे संबंधित अन्य क्रियाकलापों जैसे खुदाई, सिंचाई, खेतों की जुताई, फसलों, घास और वृक्षों की कटाई तथा एक–इन्द्रिय जीवों, जो पौधों, वृक्षों, मिट्टी आदि में निवास करते थे, को नष्ट किए जाने जैसे क्रियाकलापों द्वारा होने वाली हिंसा!

बौद्ध–धर्म अहिंसा की मनोवृत्ति के आंतरिक अनुभव तथा अहिंसात्मक कार्य के रूप में इसकी बाह्य अभिव्यक्ति, दोनों को दो भिन्न चीजें मानता है। इस प्रकार, बुद्ध ने अपना अहिंसा का दर्शन इस सामान्य तथ्य पर आधारित माना है कि यद्यपि अहिंसा का पूर्णतया पालन कठिन हो सकता है परंतु हृदय में अहिंसा की मनोवृत्ति को पूर्ण तौर से उत्पन्न करना असंभव नहीं है। दूसरे शब्दों में, अहिंसा का वास्तविक पालन जीवन, जिसके प्रतिवादों को हल करना कठिन है, की सही पहचान के आधार पर ही किया जा सकता है। इस तथ्य को स्वीकार करते हुए बुद्ध ने अहिंसा के कार्य को अनावश्यक रूप से कठोर नियमों से आबद्ध नहीं किया। इस प्रकार का संतुलित तथा विवेकपूर्ण अहिंसा का सिद्धांत मानव सभ्यता के लिए संभवतः बौद्ध–धर्म की अत्यंत महत्त्वपूर्ण देन है।

जीवित प्राणियों के प्रति अहिंसा, जो कि बौद्ध–धर्म का प्रथम शिक्षापद है संपूर्ण प्रकृति

में पाए जाने वाले आपसी आकर्षण तथा अच्छाई के सिद्धांत पर आधारित है। जान–बूझ कर हिंसा करने का तात्पर्य है, अंतर्निहित अखंडता को बाधित और नष्ट करना तथा सम्मान और करूणा, जो कि मानवता के आधार हैं, की भावनाओं को कुंठित करना।

अहिंसा के अभ्यास का आधार दया, हितकामना तथा जीवित प्राणियों की हिंसा तथा हानि पहुँचाने जैसी क्रूरता से लज्जा अनुभव करना है। इस प्रकार से बौद्ध–धर्म में अहिंसा का करूणा तथा लज्जा से एकीकरण कर दिया गया है। अहिंसा का अनुपालन व्यक्ति को प्रेम का सच्चा अनुभव कराता है और इससे सुख की प्राप्ति होती है और इसके अतिरिक्त इस सुख को आध्यात्मिक रूप से अतिरेक आनंद की अवस्था माना जाता है। उपासकों और उपासिकाओं से जिस पंचशील के पालन को कहा गया है उनमें पहला है जीव हिंसा से बचना। बौद्ध–धर्म गर्भपात को मुनष्य की हत्या के समान ही हत्या मानता है। आत्महत्या भी बौद्ध–धर्म में मना है।

पेड़–पौधों को हानि पहुँचाने पर भी रोक है तथा इस प्रकार बुद्ध के अनुसार एक आदर्श व्यक्ति प्राणिजात तथा वनस्पति–जीवन को हानि पहुँचाने से बचता है। उन्होंने सबसे जीव–जंतुओं के प्रति करूणा करने का आग्रह किया। वे सभी जो हत्या या निर्दयतापूर्वक आजीविका अपनाते हैं, जैसे – कसाई, बहेलिया, शिकारी, मछुआरा, डाकू, जल्लाद तथा कारागारिक, सभी बौद्ध–धर्म में हीन भाव से देखे गए हैं।

प्राचीन भारतीय बौद्ध–धर्म का युद्ध, कृषि तथा मांस–भक्षण के प्रति दृष्टिकोण खूनी बलियों की अपेक्षा अधिक मिश्रित था। अहिंसा का बौद्ध–सिद्धांत तथाकथित कृषि क्रांति से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ दिया गया है। इस प्रकार अपने दर्शन का आधार मेत्ता, करूणा, मुदिता तथा उपेक्खा के साथ सभी जीवों का कल्याण की कामना करता हुआ यह मानवता की सर्वोच्च पराकाष्ठा को प्रस्तुत करता है।

भारतीय प्रकृति–चिंतन

''माता भूमिः पुत्रोऽम्''

प्रकृति ने यह सृष्टि बनायी है, मानव ने नहीं। इसे सजाया–संवारा और इसमें रोमांच व रोमानियत सबकुछ प्रकृति ने भरा है। हम मानव बस इसके एक अभिन्न अंग हैं। हमारा काम है, इसके साथ अंतरंग होकर, इसके उत्थान में सहयोग देना, परन्तु मानव, प्रकृति पर जबर्दस्ती अपनी इच्छाएँ थोपने की कोशिश करता है, वह यह सोचता ही नहीं कि प्रकृति ने हमें बनाया है न कि हमने प्रकृति को।

मनुष्य की यही सोच प्रतिद्वंद्विता उत्पन्न करती है, और मानव बारम्बार प्रकृति से पराजित होता रहता है, चाहे वह – भूकम्प, बाढ़, सुनामी, ज्वालामुखी–विस्फोट, अकाल तथा आँधी–तूफान के रूप में ही क्यों न हो। यहाँ तक की मानव स्वयं प्रकृति के सहयोग के बगैर अपने जैसे नये जीव (शिशु को जन्म देना!) की उत्पत्ति नहीं कर सकता। किसी अन्य जीव

को जन्म देने की तो मानव कल्पना भी ना करे!

मानव की विकास करने की क्षमता, अपनी जरूरतों का पहले ध्यान रखना तथा दूसरों की और दुनिया की जरूरतों के बारे में बाद में सोचना पृथ्वी की समस्याओं का मुख्य कारण हो सकते हैं। आबादी तथा मानव की जरूरत और लालच के बढ़ने के साथ, मानव जाति के विकास की प्रक्रिया में प्रकृति को सबसे बड़ा आघात लगा है। दशकों तक प्रकृति का शोषण करने के बाद पश्चिम अब व्यवसाय और आय के स्रोत के रूप में पर्यावरण को बचाने की सोच रहा है, जबकि विकासशील दुनिया प्राकृतिक संसाधनों को अमीर बनने और सहज महसूस करने के साधनों के रूप में देखती है, जैसा पहले पश्चिम किया करता था। अब पश्चिम और बाकी दुनिया के हितों में टकराव के साथ, सभी हितपरायण और प्रभावित पक्षों की जरूरतों को पूरा करने के लिए सभी को एक बीच का रास्ता निकालना होगा।

''क्षिति–जल–पावक–गगन समीरा''

मानव स्वयं 5 पदार्थों – अनंत या आकाश, जल, अग्नि, मिट्टी और हवा, इन पाँचों से मिलकर बना है। इन पदार्थों के निर्माण में भी मानव का कोई हस्तक्षेप नहीं है ओर जहाँ हस्तक्षेप की कोशिश भी होती है तो वह मानव के अहित में ही होता है।

मानव को ही नहीं बल्कि धरती के हर जीवित प्राणी यथा पेड़–पौधों को भी श्वास हेतु वायु, शरीर में रक्त–संचरण हेतु जल और ऊर्जा के लिए भोजन की निरंतर आवश्यकता

होती है। ये सभी चीजें हमें प्रकृति प्रदान करती है। मानव जन्म से लेकर मरण तक प्रकृति से जुड़ा हुआ है, इससे विलग होकर रहने की वो कल्पना भी नहीं कर सकता। बिना प्राणवायु के मानव मिनटों में मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा और इसका रहस्य भी सिर्फ प्रकृति ही जानती है कोई अन्य कदापि नहीं। मृत्यु के बाद और जन्म के पूर्व क्या होता है, शरीर में आत्मारूपी पुद्गल कहाँ से आता है और मृत्यु–उपरांत कहाँ जाता है कोई नहीं बता सकता। शायद इसीलिए प्राचीनतम् भारतीय सभ्यता (सिंधु घाटी सभ्यता) में लिंग–पूजन की प्रथा रही है, जो उर्वरा का प्रतीक है, जो जन्म और जीवन का प्रतीक है, और यह आज भी भारत में प्रचलित है। जब संसार में मानव द्वारा संचालित कोई धार्मिक कर्मकाण्ड न था तो मनुष्य प्रकृति की ही पूजा करता था और आज भी सभी धार्मिक–सम्प्रदायों में पूर्णतः न सही अंशतः प्रकृति–पूजा ही की जाती है। भारतीय धर्मों में अरूण, वरूण, अग्नि, वसुधा, पीपल, वट, तुलसी, गाय आदि की पूजन के रीति–रिवाज हैं। साथ ही नदियों, कुओं, तालाबों आदि को भी पूजने की प्रथा है जो सर्वथा प्रकृति–पूजा है। प्रकृति जननी है, नदियाँ सभ्यताओं की जननी है, गाय जननी है, वसुधा–अन्नपूर्णा है, स्त्री जननी है, वृक्ष पालन–कर्त्ता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है, और कृषि भारत की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। परन्तु अंधाधुंध प्रकृति का दोहन, कृषि भूमि पर अनियंत्रित फैलती विशालकाय बहुमंजिली इमारतें, जंगलों का कटाव, प्रदूषण के कारण विषैला होता पर्यावरण आज अनेक गंभीर समस्याओं का दाता बन गया है।

हमारा भोजन कितना स्वास्थयवर्द्धक है हमें खुद नहीं पता क्योंकि कभी फलों सब्जियों को इंजेक्शन द्वारा आकार बढ़ाने की बात सामने आती है तो कभी दूध और सब्जियों में हानिकारक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग एवं कृत्रिम रंगों से इस्तेमाल की बातें। मटर और परवल जैसी सब्जियों को हरे रंग से रंगकर बेचना तो आम बात हो गयी है। दिल्ली जैसे शहरों में मैंने जूस में रंगों का प्रयोग लोगों को करते देखा है।

इसलिए मानव भले ही धरती से अंतरिक्ष में सैर करे, लेकिन प्रकृति से विलग नहीं रह सकता। हमारा जीवन प्रकृति की अमूल्य देन है, इसे संवारना है, साथ ही साथ प्रकृति की सुरक्षा भी करनी है। चूँकि आज जिस प्रकार जीन–परिवर्त्तन, लिंग–परिवर्तन, परखनली–शिशु, क्लोन आदि अप्राकृतिक प्रक्रियाओं से प्रकृति पर विजय प्राप्त करने की कोशिश कर रहा है, वह बिल्कुल ही अनैतिक, अमानवीय, अप्राकृतिक और प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ने वाली कलाएँ हैं। मानव को चाहिए, वह प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करे, उसे समझे, उसे संरक्षण दे और दीर्घायु जीवन जीये। अन्यथा प्रकृति से छेड़छाड़ मानव को उत्थान की जगह पतन की ओर ही ले जायेगा।

भारतीय जीवन–पद्धति के कुछ मूलभूत तत्त्व

1. शाकाहार
2. अहिंसा
3. प्रातः सूर्योदय–पूर्व स्नान = सूर्य को जल देना!
4. सांय आरती व धूप–दीपदान

5. गो–पूजन व पशुपालन
6. भूमि–पूजन एवं फसल बुवाई तथा कटाई के समय त्योहार मनाना।
7. वृक्ष–पूजन व वृक्षारोपण = तुलसी को जल देना।

भारतीय उत्सव–त्योहारों में प्रकृति–चिंतन

1. प्राचीनतम एवं महानतम् सूर्योपासना–पर्व = छठ पर्व, पूर्णतः प्रकृति पूजा, नदियों का वंदन।
2. मकर–संक्रांति = नदी–स्नान, फसल कटाई, सूर्योपासना।
3. वंसत–पंचमी = विद्या की देवी की आराधना, नववर्ष का आगमन।
4. गंगा–दशहरा = नदियों का पूजन।
5. सावन माह में काँवर–यात्रा =गंगा जल से शिवलिंग का अभिषेक।
6. होली/वसंतोत्सव = होलिका–दहन एवं गुलाल अबीर का खेल।
7. वट–पूजा = वट–वृक्ष की पूजा।
8. करवाचौथ = चन्द्रोपासना।
9. दिपावली = दीप एवं अग्नि पर्व।
10. गोवर्धन पूजा = गो–पूजा, पशुपालन को सूचित करना।
11. बैशाखी व बिहू = फसल कटाई–पर्व नव वर्षारंग।

प्रकृति की जैव–विविधता को बचाते हुए, नवीकरणीय संसाधनों के प्रयोग को बढ़ावा देना चाहिए, अधिक से अधिक सौर–ऊर्जा का प्रयोग कर, वर्षा जल का संग्रहण कर, वनों का संरक्षण कर विश्व में उभर रही जलवायु–परिवर्तन की समस्या से मानव जाति ही नहीं वरन् सम्पूर्ण धरती और प्रकृति को बचाना चाहिए। यही हमारा मानव–धर्म है।

भारतीय प्रकृति–वंदन

– मातृवत परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्ठवत।

आत्मवत् सर्वभूतेषु य पश्यति सः पण्डितः।।

– समुद्रवसने देविः पर्वतस्तनमण्डले।

विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं, पादस्पर्शं क्षमस्वमे।। (प्रातः भूमि वंदना)

– कराग्रेवसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती।

करमूले तु गोविन्दः प्रभाते करदर्शनम्।। (प्रातः हस्त दर्शन)

– अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

– मूले ब्रह्मा त्वचा विष्णु शाखायाम् महेश्वरः।

पत्रम् सर्वदेवानाम् वृक्षदेव नमोऽस्तुते।।

– गीता में श्रीकृष्ण जी कहते हैं – वृक्षों में मैं पीपल हूँ।

– हे भगवान्! तू वृक्ष है अर्थात् विश्व का मूलरूप है और सृष्टि तेरी शाखा है = गुरुग्रंथ साहिब

– जो व्यक्ति हरा दरख्त काटता है, उसे खुदा कभी माफ नहीं करता = कुरान।

निष्कर्ष

इन्हीं भावनाओं ने मध्यकालीन भारत में अनेक संतों के जीवन का निर्माण किया और आधुनिक भारत के महान् मस्तिष्कों को भी बुद्ध के उपदेशों से मार्गदर्शन मिला है। गुरुनानक देव एवं कबीर की वाणियों में मूर्तिपूजा का विरोध और मानवीय संवेदना स्पष्टतः परिलक्षित हुई हैं। महात्मा गाँधी के ऊपर भगवान् बुद्ध के जीवन का जो प्रभाव पड़ा, वह स्पष्ट ही है। सत्याग्रह के सिद्धांत को उन्होंने अपने व्यक्तित्व और सार्वजनिक जीवन में कार्यरूप में परिणत किया। जवाहर लाल नेहरू ने अनेकों बार यह घोषणा की कि भारत और उसके बाहर सम्पूर्ण झगड़ों को शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाने में उनका दृढ़ विश्वास है। यही कारण है कि भारत कभी किसी शक्ति–गुट में सम्मिलित नहीं रहा। भारत की घोषित अंतर्राष्ट्रीय नीति पंचशील पर आधारित रही है, जो सदाचार के पाँच नियमों के रूप में एक बौद्ध शब्द है और जिसमें विभिन्न आदर्शों को मानने वाले राष्ट्रों के सह–अस्तित्व की संभावना के लिए गुंजाइश सदा रही है।

वर्तमान प्रधानमंत्री माननीय मोदी जी ने अपने भाषणों में स्पष्ट रूप से अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के समक्ष सम्राट अशोक की भांति धम्म–विजय की घोषणा की है, विश्व को शांति और समृद्धि का पथ दिखाते हुए मंजिल तक पहुँचाने की जिम्मेदारी भारत की है। क्योंकि भारत जाग चुका है।

''विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा!''

धीरज कुमार निर्भय

(एम.फिल.), बौद्ध–अध्ययन विभाग

दिल्ली विश्वविद्यालय (7065483350)

dhiraj.nirbhay@gmail.com

संदर्भ ग्रंथ –

- बौद्ध–धर्म के 2500 वर्ष – पी.वी. बापट
- प्राचीन भारतीय बौद्ध–धर्म – प्रो. के.टी.एस. सराओ
- प्राचीन भारत का इतिहास – डॉ. ए.के. मित्तल
- आधुनिक भारत – स्पेक्ट्रम
- विज्ञान प्रगति – अंक : जून 2014
- पत्र इरोम शर्मिला चानु – प्रधानमंत्री मोदी जी के लिए।
- वर्ल्ड फोकस – अंक फरवरी 2014

विज्ञान प्रगति – अंक जनवरी 2016